IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

पंचकोश सिद्धांत: योगिक परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य संवर्धन

[1]लक्ष्मी कुमारी, [2]डॉ. कामता प्रसाद साहू

[1]शोध छात्रा- योग विज्ञान एवं मानव चेतना विभाग

देव संस्कृति विश्वविद्यालय शांतिकुंज गायत्री कुंज हरिद्वार

[2]एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष- मानव चेतना एवं योग विज्ञान विभाग

देव संस्कृति विश्वविद्यालय शांतिकुंज गायत्री कुंज हरिद्वार

सारांश

भारतीय जीवनदर्शन में प्रतिपादित पंचकोश सिद्धांत मानव स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास का एक समग्र एवं वैज्ञानिक आधार है। पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी के अनुसार मनुष्य का आरोग्य केवल शारीरिक रोग-मुक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह शरीर, प्राण, मन, बुद्धि और आत्मा के सामंजस्यपूर्ण विकास पर आधारित है। पंचकोशीय साधना इस समग्र स्वास्थ्य का माध्यम है, जिसमें अन्नमय कोश शारीरिक सुदृढ़ता का, प्राणमय कोश जीवन ऊर्जा के प्रवाह का, मनोमय कोश मानसिक शांति और भावनात्मक संतुलन का, विज्ञानमय कोश विवेकपूर्ण निर्णय क्षमता का और आनन्दमय कोश आत्मानुभूति तथा आध्यात्मिक सुख का प्रतिनिधित्व करता है। योगाभ्यास, प्राणायाम, ध्यान, स्वाध्याय और साधना की विधियाँ इन कोशों को परिष्कृत एवं संतुलित करने में सहायक होती हैं। आचार्य जी मानते हैं कि पंचकोश सिद्धांत केवल दार्शनिक प्रतिपादन न होकर स्वास्थ्य संवर्धन का एक व्यवहारिक और वैज्ञानिक मॉडल है, जो आधुनिक जीवनशैली जनित रोगों और मानसिक तनाव की चुनौतियों के समाधान में विशेष रूप से प्रासंगिक है। यह शोध इस बात को स्पष्ट करता है कि यदि भारतीय जीवन पद्धति और योग की परंपराओं को पंचकोशीय दृष्टि से अपनाया जाए तो वे आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का प्रभावी पूरक बनकर वैश्विक स्तर पर समग्र आरोग्य की दिशा में एक सशक्त विकल्प प्रस्तुत कर सकती हैं।

कूट शब्द : पंचकोश , समग्र आरोग्य, भारतीय जीवन पद्धति

प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास क्रम में स्वास्थ्य की अवधारणा हमेशा से केन्द्रीय रही है। प्राचीन भारतीय ऋषियों ने स्वास्थ्य को केवल शारीरिक अवस्था न मानकर इसे मनुष्य के सम्पूर्ण अस्तित्व की एकीकृत स्थिति के रूप में देखा। आयुर्वेद में स्वास्थ्य की परिभाषा है - **"समदोषः समाग्निश्च समधातु मलक्रियः। प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥"** अर्थात शरीर, मन, इन्द्रिय और आत्मा की प्रसन्नता ही स्वास्थ्य है।

योगदर्शन और उपनिषदों में वर्णित पंचकोश सिद्धांत इस समग्र स्वास्थ्य दृष्टिकोण की गहन व्याख्या प्रस्तुत करता है। तैत्तिरीय उपनिषद के अनुसार, मानव जीवन पाँच कोशों या आवरणों से बना है — **अन्नमय (शारीरिक), प्राणमय (ऊर्जात्मक), मनोमय (मानसिक), विज्ञानमय (बौद्धिक) और आनन्दमय (आध्यात्मिक) कोश।** ये सभी कोश एक-दूसरे से अंतःसंबंधित हैं और स्वास्थ्य तभी संभव है जब इनका संतुलन बना रहे।

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने अपने लेखन और प्रवचनों में बार-बार इस तथ्य पर बल दिया कि वर्तमान समय की अधिकांश समस्याएँ — रोग, मानसिक तनाव, असामाजिक प्रवृत्तियाँ — पंचकोशीय असंतुलन का परिणाम हैं। उनका मानना था कि योगाभ्यास, ध्यान, प्राणायाम और सात्त्विक जीवनशैली के माध्यम से पंचकोशों का शोधन एवं संतुलन कर समग्र आरोग्य की स्थापना की जा सकती है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य पंचकोश सिद्धांत को एक समग्र स्वास्थ्य मॉडल के रूप में प्रस्तुत करना है, जो आधुनिक जीवनशैली की चुनौतियों का समाधान प्रदान कर सकता है।

पंचकोश

पंचकोश (Pancha Kosha) भारतीय वेदांत दर्शन और योगशास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है। "कोश" शब्द का अर्थ है आवरण या परत। मानव शरीर और चेतना केवल स्थूल शरीर तक सीमित नहीं है, बल्कि उसके ऊपर पाँच आवरण (कोश) होते हैं। ये आवरण आत्मा (चैतन्य) को ढँकते हैं और उसके विभिन्न स्तरों की अभिव्यक्ति करते हैं।

पंचकोश योग उन पाँच शरीरों का मिलन है जिनसे मनुष्य बना है। स्वस्थ जीवन तभी प्राप्त किया जा सकता है जब व्यक्ति अपने जीवन के सभी क्षेत्रों में स्वस्थ हो। एक सदाचारी जीवन जीने से शारीरिक, मानसिक और आत्मिक स्तरों पर स्वस्थ अस्तित्व प्राप्त होता है। सही प्रकार का अन्न (भोजन) ग्रहण करने और शुद्ध प्राण (उत्तम निःश्वस उच्च्वास) का सेवन करने से अन्नमय और प्राणमय कोष मजबूत होते हैं। चिंतन और मनन में संलग्न रहने से दो कोष अर्थात मनोमय और विज्ञानमय कोष मजबूत होते हैं। ध्यान और अन्य आत्मिक क्रियाओं (आध्यात्मिक गतिविधियों) में संलग्न रहने से आनंदमय कोष मजबूत होता है। जब सभी पाँच कोष सामंजस्य में कार्य करते हैं तो यह ओज को समृद्ध करता है जिसके परिणामस्वरूप बल और तेज का पोषण होता है जो मन और शरीर के प्रभावी और स्वस्थ कामकाज के लिए आवश्यक है।

इन पाँच कोशों एवं देवताओं की पाँच प्रत्यक्ष सिद्धियाँ हैं- अन्नमय कोश की सिद्धि से निरोगता, दीर्घ जीवन एवं चिर यौवन का लाभ है। प्राणमय कोश से साहस, शौर्य, पराक्रम, प्रभाव, प्रतिभा जैसी विशेषताऐं उभरती हैं। प्राण विद्युत की विशेषता से आकर्षक चुम्बक व्यक्तित्व में बढ़ता जाता है। और प्रभाव क्षेत्र पर अधिकार बढ़ता जाता है। मनोमय कोश की जागृति से विवेक शीलता, दूरदर्शिता, बुद्धिमत्ता बढ़ती है और उतार- चढ़ावों में धैर्य सन्तुलन बना रहता है। विज्ञान मय कोश में सज्जनता का; उदार सहृदयता का विकास होता है और देवत्व की उपयुक्त विशेषताऐं उभरती हैं। अतीन्द्रिय ज्ञान अपरोक्षानुभूति दिव्य दृष्टि जैसी उपलब्धियाँ विज्ञानमय कोश की हैं। आनन्दमय कोश के विकास से चिन्तन तथा कर्तृत्व दोनों ही इस स्तर के बन जाते हैं कि हर घड़ी आनन्द छाया रहे संकटों का सामना ही न करना पड़े। ईश्वर दर्शन, आत्म साक्षात्कार, स्वर्ग मुक्ति जैसी महान उपलब्धियाँ आनन्दमय कोश की ही देन हैं।

पंचकोश सिद्धांत पर प्राचीन शास्त्रों और आधुनिक विद्वानों ने विस्तृत विवेचन किया है।

1. उपनिषदों में — तैत्तिरीय उपनिषद (ब्रह्मानंदवल्ली) में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि आत्मा पाँच आवरणों से घिरी हुई है।

2. योगशास्त्र में — पतंजलि योगसूत्र, हठयोग प्रदीपिका और गोरक्षशतक में योगाभ्यास को पंचकोश शुद्धि का साधन बताया गया है।

3. आयुर्वेद में — स्वास्थ्य की परिभाषा केवल शारीरिक न होकर मानसिक और आत्मिक संतुलन से जुड़ी है, जो पंचकोश सिद्धांत से साम्य रखती है।

4. आधुनिक विद्वान — स्वामी विवेकानंद, श्री अरबिंदो और महर्षि महेश योगी ने पंचकोश को मनुष्य की पूर्णता की कुंजी माना है।

5. पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी — आचार्य जी ने 'सुप्त शक्ति का जागरण', 'आत्मा का उत्कर्ष और भविष्य का निर्माण' तथा 'आत्मनिर्माण ही जगनिर्माण है' जैसे ग्रंथों में पंचकोशों की व्याख्या कर उन्हें साधना और स्वास्थ्य संवर्धन का आधार बताया।

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी का मानना था कि पंचकोशीय संतुलन के बिना व्यक्ति पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त नहीं कर सकता।

अन्नमय कोश

आत्मा के पाँच कोशों में प्रथम कोश का नाम अन्नमय कोश है। अत्र का सात्त्विक अर्थ है- पृथ्वी का रस । पृथ्वी से जल, अनाज, फल, तरकारी घास आदि पैदा होते हैं। उन्हों से दूध घी, मांस आदि भी बनते हैं। यह सब अत्र कहे जाते हैं। इन्हीं के द्वारा रज वीर्य बनते हैं और इन्हीं से इस शरीर का निर्माण होता है। अन्न द्वारा ही देह बढ़ती है,पुष्ट होती है तथा अन्त में अन्नरूप पृथ्वी में ही भस्म होकर सड़-गलकर मिल जाती है. अन्न से उत्पन्न होने वाला और उसी में जाने वाला यह देह प्रधानता के कारण 'अनमय कोश' कहा जाता है। हाड़-मास का जो यह पुतला दिखाई देता है, वह अत्रमय कोश की अधीनता में है, पर उसे ही अन्नमय कोश न समझ लेना चाहिये। मृत्यु हो जाने पर देह तो नष्ट हो जाती है, पर अत्रमय कोश नष्ट नहीं होता। वह जीव के साथ रहता है। बिना शरीर के भी जीव भूतयोनि में या स्वर्ग-नरक में उन भूख-प्यास, सर्दी, गर्मी, चोट, दर्द आदि को सहता है जो जो स्थूल शरीर से सम्बन्धित हैं। इसी प्रकार उसे, उन इन्द्रिय भोगों की चाह रहती है, जो शरीर द्वारा भोगे जाने सम्भव हैं। भूतों की इच्छाएँ वैसी ही आहार-विहार की रहती हैं, जैसी शरीर-धारी मनुष्यों की होती हैं। इससे प्रकट है कि अन्नमय कोश शरीर का संचालक, कारण, उत्पादक, उपभोक्ता आदि तो है पर, उससे पृथक् भी है। इसे सूक्ष्म शरीर भी कहा जा सकता है।

अत्रमयकोश की स्थिति के अनुसार शरीर का ढाँचा और रंग रूप बनता है.। उसी के अनुसार इन्द्रियों की शक्तियों होती है। बालक जन्म से ही कितनी ही शारीरिक त्रुटियाँ, अपूर्णताये या विशेषतायें लेकर आता है। किसी की देह आरम्भ में ही मोटी, किसी की जन्म से ही पतली होती है। आँखों की दृष्टि, वाणी की विशेषता, मस्तिष्क का भौंड़ा या तीव होना, किसी विशेष अंग का निर्बल या न्यून होना, अन्नमय कोश की स्थिति के अनुरूप होता है। माता-पिता के रज-वीर्य का भी उसमे थोड़ा प्रभाव होता है, पर विशेषता अपने कोश की ही रहती है। कितने ही बालक माता-पिता की अपेक्षा अनेक बातों में बहुत भिन्न पाये जाते हैं।

शरीर अत्र से बनता और बढ़ता है। अन्न के भीतर सुक्ष्म जीवन तत्त्व रहता है, वह अन्नमय कोश को बनाता है। जैसे शरीर में पाँच कोश हैं, वैसे ही अन्न में तीन कोश हैं- स्थूल, सूक्ष्म, कारण। स्थूल में स्वाद और भार, सूक्ष्म में प्रभाव और गुण तथा कारण के कोश में अन्न का संस्कार रहता है। जिह्वा से केवल भोजन का स्वाद मालूम होता है। पेट उसके बोझ का अनुभव करता है, रस में उसकी मादकता, उष्णता आदि प्रकट होती है।

अन्नमय कोश पर उसका संस्कार जमता है। मांस आदि अनेक अभक्ष्य पदार्थ ऐसे हैं जो जीभ को स्वादिष्ट लगते हैं. देह को मोटा बनाने में भी सहायक होते हैं. पर उनमें सूक्ष्म संस्कार ऐसा होता है. जो अत्रमय कोश को विकृत कर देता है और उसका परिणाम अदृश्य रूप से आकस्मिक रोगों के रूप में तथा जन्म-जन्मान्तर तक कुरूपता एवं शारीरिक अपूर्णता के रूप में चलता है। इसलिये आत्म विद्या के ज्ञाता सदा सात्त्विक, सुसंस्कारी अन्न पर जोर देते हैं, ताकि स्थूल शरीर में बीमारी, कुरूपता, अपूर्णता, आलस्य एवं कमजोरी की बढ़ोत्तरी न हो। जो लोग अभक्ष्य खाते हैं, वे अब नहीं तो भविष्य में ऐसी आन्तरिक विकृति से ग्रस्त हो जायेंगे, जो उनको शारीरिक सुख से वञ्चित रखे रहेगी। इस प्रकार अनीति से उपार्जित धन या पाप की कमाई प्रकट में आकर्षक लगने पर भी अत्रमय कोश को दूषित करती है और अन्त में शरीर को विकृत तथा चिररोगी कर देती है। धन सम्पन्न होने पर भी ऐसी दुर्दशा भोगने के अनेक उदाहरण प्रत्यक्ष दिखाई दिया करते हैं।

कितने ही शारीरिक विकारों की जड़ अन्नमय कोश में होती है। उनका निवारण दवा-दारू से नहीं, यौगिक साधनाओं से हो सकता है। जैसे संयम, चिकित्सा, शल्यक्रिया, व्यायाम, मालिश, विश्राम, उत्तम आहर-विहार, जलवायु आदि से शारीरिक स्वास्थ्य में बहुत कुछ अन्तर हो सकता है, वैसे ही कुछ ऐसी भी प्रक्रियाएँ हैं जिनके द्वारा अन्नमय कोश को परिमार्जित एवं परिपुष्ट किया जा सकता है और विविध-विध शारीरिक अपूर्णताओं से छुटकारा पाया जा सकता है। ऐसी पद्धतियों में **१-उपवास २-आसन, ३-तत्त्व शुद्धि, ४-तपश्चर्या-ये चार मुख्य हैं।**

प्राणमय-कोश

'प्राण' शक्ति एवं सामर्थ्य का प्रतीक है। मानव शरीर के बीच जो अन्तर पाया जाता है, वह बहुत साधारण है। एक मनुष्य जितना लम्बा-मोटा एवं भारी है, दूसरा भी उससे थोड़ा-बहुत ही न्यूनाधिक होगा, परन्तु मनुष्य की सामाजिक शक्ति के बीच जो जमीन आसमान का अन्तर पाया जाता है, उसका कारण उसकी आन्तरिक शक्ति है।

विद्या, चतुराई, अनुभव, दूरदर्शिता, साहस, लगन, शौर्य, जीवनीशक्ति, ओज, पुष्टि, पराक्रम, पुरुषार्थ, महानता आदि नामों से इस आन्तरिक शक्ति का परिचय मिलता है। आध्यात्मिक भाषा में इसे प्राणशक्ति कहते हैं।

प्राण नेत्रों में होकर चमकता है, चेहरे पर बिखरता फिरता है, हाव-भाव में उसकी तरंगें बहती है। प्राण की गन्ध में एक ऐसी विलक्षण मोहकता होती है, जो दूसरों को विभोर कर देती है। प्राणवान् स्त्री-पुरुष मन को ऐसे भाते हैं कि उन्हें छोड़ने को जी नहीं चाहता।

प्राण, वाणी में घुला रहता है उसे सुनकर सुनने वालों की मानसिक दीवारें हिल जाती हैं। मौत के दाँत उखाड़ने के लिये जान हथेली पर रखकर जब मनुष्य चलता है, तो उसकी प्राण शक्ति ही ढाल-तलवार होती है। चारों ओर निराशाजनक घनघोर अन्धकार छाया होने पर भी प्राणशक्ति आशा की प्रकाश रेखा बनकर चमकती है। बालू में तेल निकालने की, मरुभूमि में उपवन लगाने की, असम्भव को सम्भव बनाने की, राई को पर्वत करने की सामर्थ्य केवल प्राणवान् में ही होती है। जिसमें स्वल्प प्राण हैं, उसे जीवित मृतक कहा जाता है। शरीर से हाथी के समान स्थूल होने पर भी उसे पराधीन परमुखापेक्षी ही रहना पड़ता है। यह अपनी कठिनाइयों का दोष दूसरों पर थोपकर किसी प्रकार मन को सन्तोष देता है। उज्ज्वल भविष्य की आशा के लिये वह अपनी सामर्थ्य पर विश्वास नहीं करता। किसी सबल व्यक्ति की, नेता की, अफसर की, धनी की, सिद्ध पुरुष की, देवी-देवताओं की सहायता ही उसकी आशाओं का केन्द्र होती है। ऐसे लोग सदा ही अपने दुर्भाग्य का रोना रोते हैं।

प्राण द्वारा ही यह श्रद्धा, निष्ठा, दृढ़ता, एकाग्रता और भावना प्राप्त होती है, जो भव-बन्धनों को काटकर आत्मा को परमात्मा में मिलाती है, दीर्घजीवन, उत्तम स्वास्थ्य, चैतन्यता, स्फूति, उत्साह, क्रियाशीलता, कष्ट सहिष्णुता, बुद्धि की सूक्ष्मता, सुन्दरता मनमोहकता आदि विशेषतायें प्राणशक्ति रूपी फुलझड़ी की छोटी-छोटी चिनगारियाँ हैं।

प्राण तत्त्व का वायु से विशेष सम्बन्ध है। पाश्चात्य वैज्ञानिक तो प्राण को वायु का ही एक सूक्ष्म भेद मानते हैं। साँस को ठीक तरह लेने न लेने पर प्राण की मात्रा का घटना-बढ़ना निर्भर रहता है। इसलिये कम से कम साँस लेने के सही तरीके से प्रत्येक बाल-वृद्ध को परिचित होना चाहिये।

हमें गहरी और पूरी साँस लेना चाहिये, जिससे वायु फेफड़े के हर भाग में जाकर सम्पूर्ण वायु-मन्दिरों में रक्त की सफाई कर सके। अधूरी और उथली साँस लेने से कुछ थोड़े से वायु-मन्दिरों की सफाई हो पाती है; क्योंकि उथली साँस का दबाव इतना नहीं होता कि वह हर एक कोष्ठ पर पहुँच सके। जब हवा वहाँ तक पहुँचेगी ही नहीं, तो सफाई किस प्रकार होगी ? साँस का सम्पर्क होने पर रक्त की अशुद्धता-कार्बोनिक एसिड गैस-बाहर निकल जाती है और साँस का प्राण-आक्सीजन में घुल जाता है।

यह प्राण शक्ति उस शुद्ध रक्त के दूसरे दौरे के साथ शरीर के अंग-प्रत्यंगों में पहुँचकर उन्हें ताजगी और
स्फूर्ति प्रदान करती है।

मनोमय कोश

पंचकोशों में तीसरा 'मनोमय कोश' है। मन बड़ा चंचल और वासनामय है। यह सुख प्राप्ति की अनेक कल्पनाएँ किया करता है। कल्पनाओं के ऐसे रंग-बिरंगे चित्र तैयार करता है कि उन्हें देखकर बुद्धि भ्रमित हो जाती है और मनुष्य ऐसे कार्यों को अपना लेता है, जो उसके लिए अनावश्यक एवं हानिकारक होते हैं तथा जिनके लिए उसको पीछे पश्चात्ताप करना पड़ता है। अच्छे और प्रशंसनीय कार्य भी मन की कल्पना पर अवलम्बित हैं। मनुष्य को नारकीय एवं घृणित पतितावस्था तक पहुँचा देना अथवा उसे मानव-भूसुर बना देना मन का ही खेल है।

'मन' में प्रचण्ड प्रेरक शक्ति है। इस प्रेरक शक्ति से अपने कल्पना चित्रों को वह ऐसा सजीव कर देता है कि मनुष्य बालक की तरह उसे प्राप्त करने के लिए दौड़ने लगता है। रंग-बिरंगी तितलियों के पीछे जैसे बच्चे दौड़ते-फिरते हैं, तितलियाँ जिधर जाती हैं, उधर ही उन्हें भी जाना पड़ता है, इस प्रकार मन में जैसी कल्पनाएँ, इच्छाएँ, वासनाएँ, तृष्णाएँ उठती हैं उसी ओर शरीर चल पड़ता है।

चूँकि सुख की आकांक्षा ही मन के अन्तराल में प्रधान रूप से काम करती है, इसलिए वह जिस बात में, जिस-जिस दिशा में सुख प्राप्ति की कल्पना कर सकता है, उसी के अनुसार एक सुन्दर मनमोहक रंग-बिरंगी योजना तैयार कर देता है, मस्तिष्क उसी ओर लपकता है। शरीर उसी दिशा में काम करता है; परन्तु साथ ही मन की चंचलता भी प्रसिद्ध है, इसलिए वह नई कल्पनाएँ करने में पीछे नहीं रहता। कल की योजना पूरी नहीं हो पाई थी कि उसमें भी एक नई और तैयार हो गई। पहली छोड़कर नई में प्रवृत्ति हुई। फिर वही क्रम आगे भी चला। उसे छोड़कर और नया आयोजन किया।

इस प्रकार अनेक अधूरी योजनाएँ पीछे छूटती जाती हैं और नई बनती जाती हैं। 'अनियन्त्रित' मन का यह कार्यक्रम है। वह मृग तृष्णाओं में मनुष्य को भटकाता है और असफलताओं की, अधूरे कार्यक्रमों की अगणित ढेरियाँ लगाकर जीवन को मरघट जैसा कर्कश बना देता है।

ध्यान वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके अनुसार किसी वस्तु की स्थापना अपने मनःक्षेत्र में की जाती है। मानसिक क्षेत्र में स्थापित की हुई वस्तु हमारे आकर्षण का प्रधान केन्द्र बनती है। उस आकर्षण की ओर मस्तिष्क की अधिकांश शक्तियाँ खिंच जाती हैं। फलस्वरूप एक स्थान पर उनका केन्द्रीकरण होने लगता है। चुम्बक पत्थर अपने चारों ओर बिखरे हुए लौहकणों को सब दिशाओं से खींचकर अपने पास जमा कर लेता है। इसी प्रकार ध्यान द्वारा मन सब ओर से खिंचकर एक केन्द्र बिन्दु पर एकाग्र होता है, बिखरी हुई चित्त-प्रवृत्तियाँ एक जगह सिमट जाती हैं।

मनोमय कोश की स्थिति एवं एकाग्रता के लिए जप का साधन बड़ा ही उपयोगी है। इसकी उपयोगिता इससे निर्विवाद है कि सभी धर्म, मजहब, सम्प्रदाय इसकी आवश्यकता को स्वीकार करते हैं। जप करने से मन की प्रवृत्तियों को एक ही दिशा में लगा देना सरल हो जाता है।

विज्ञानमय कोश

अन्नमय, प्राणमय और मनोमय इन तीनों कोशों के उपरान्त आत्मा का चौथा आवरण, गायत्री का चौथा मुख विज्ञानमय कोश है। आत्मोन्नति की चतुर्थ भूमिका में विज्ञानमय कोश की साधना की जाती है। विज्ञान का अर्थ है विशेष ज्ञान। साधारण ज्ञान के द्वारा हम लोक-व्यवहार को, अपनी शारीरिक, व्यापारिक,

सामाजिक, कलात्मक, धार्मिक समस्याओं को समझते हैं। स्थूल में इसी साधारण ज्ञान की शिक्षा मिलती है। राजनीति, अर्थशास्त्र, शिल्प, रसायन, चिकित्सा, संगीत, वक्तृत्व, लेखन, व्यवसाय, कृषि, निर्माण, उत्पादन आदि विविध बातों की जानकारी विविध प्रकार से की जाती है। इन जानकारियों के आधार पर शरीर से सम्बन्ध रखने वाला सांसारिक जीवन चलता है। जिसके पास यह जानकारियाँ जितनी अधिक होंगी, जो लोक व्यवहार में जितना अधिक प्रवीण होगा, उतना ही उसका सांसारिक जीवन उन्नत, यशस्वी, प्रतिष्ठित, सम्पन्न एवं ऐश्वर्यवान् होगा।

जिस मनोभूमि में पहुँचकर जीव यह अनुभव करता है कि मैं शरीर नहीं वस्तुतः "आत्मा ही हूँ" उस मनोभूमि को विज्ञानमय कोश कहते हैं। अन्नमय कोश में जब तक जीव की स्थिति रहती है, तब तक वह अपने को स्त्री-पुरुष, मनुष्य, पशु, मोटा-पतला, पहलवान, काला, गोरा आदि शरीर सम्बन्धी भेदों से पहचानता है। जब प्राणमय कोश में जीव की स्थिति होती है, तो गुणों के आधार पर अपनत्व का बोध होता है। शिल्पी, संगीतज्ञ, वैज्ञानिक, मूर्ख, कायर, शूरवीर, लेखक, वक्ता, धनी, गरीब आदि की मान्यताएँ प्राण भूमिका में होती हैं। मनोमय कोश की स्थिति में पहुँचने पर अपने मन की मान्यता स्वभाव के आधार पर होती है। लोभी, दम्भी, चोर, उदार, विषयी, संयमी, नास्तिक, आस्तिक, स्वार्थी, परमार्थी, दयालु, निष्ठुर आदि कर्तव्य और धर्म की औचित्य-अनौचित्य सम्बन्धी मान्यतायें जब अपने सम्बन्ध में बनती हों, उन्हीं पर विशेष ध्यान रहता हो, तो समझना चाहिए कि जीव मनोमय भूमिका की तीसरी कक्षा में पहुँचा हुआ है। इससे चौथी कक्षा विज्ञान भूमिका है, जिसमें पहुँचकर जीव अपने को यह अनुभव करने लगता है कि मैं शरीर से, गुणों से, स्वभाव से ऊपर हूँ मैं ईश्वर का राजकुमार, अविनाशी आत्मा हूँ।

जीभ से अपने को आत्मा कहने वाले असंख्य लोग हैं, उन्हें आत्मज्ञानी नहीं कह सकते। आत्मज्ञानी वह है, जो दृढ़ विश्वास और पूर्ण श्रद्धा के साथ अपने भीतर यह अनुभव करता है कि "मैं विशुद्ध हूँ, आत्मा के अतिरिक्त और कुछ नहीं।" शरीर मेरा वाहन है। प्राण मेरा अस्त्र है। मन मेरा सेवक है। मैं इन सबसे ऊपर, इन सबसे अलग इन सबका स्वामी आत्मा हूँ। मेरे स्वार्थ इनसे अलग हैं, मेरे लाभ और स्थूल शरीर के लाभों में, स्वार्थों में भारी अन्तर है। इस अन्तर को समझकर जीव अपने लाभ, स्वार्थ, हित और कल्याण के लिए कटिबद्ध होता है, आत्मोन्नति के लिए अग्रसर होता है, तो उसे अपना स्वरूप और भी स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

आनन्दमय कोश

गायत्री का पाँचवाँ मुख आनन्दमय कोश है। जिस आवरण में पहुँचने पर आत्मा को आनन्द मिलता है, जहाँ उसे शान्ति, सुविधा, स्थिरता, निश्चिन्तता एवं अनुकूलता की स्थिति प्राप्त होती है, वही आनन्दमय कोश है। गीता के दूसरे अध्याय में 'स्थित प्रज्ञ' की जों परिभाषा की गई है और 'समाधिस्थ' के जो लक्षण बताये गये हैं, वे ही गुण, कर्म, स्वभाव आनन्दमयी स्थिति में हो जाते हैं। आत्मिक परमार्थों की साधना में मनोयोग पूर्वक संलग्न होने के कारण सांसारिक आवश्यकतायें बहुत सीमित रह जाती हैं। उनकी पूर्ति में इसलिए बाधा नहीं आती, कि साधक अपनी शारीरिक और मानसिक स्वस्थता के द्वारा जीवनोपयोगी वस्तुओं को उचित मात्रा में आसानी से कमा सकता है।

आनन्दमय कोश में पहुँचा हुआ जीव अपने पिछले चार शरीरों अन्नमय, प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोश को भली प्रकार समझ लेता है, उनकी अपूर्णता और संसार की परिवर्तनशीलता दोनों के मिलने से ही एक विषैली गैस बन जाती है, जो जीवों को पाप-तापों के काले धुएँ से कलुषित कर देती है। यदि इन दोनों पक्षों के गुण दोषों को समझकर उन्हें अलग-अलग रखा जाए, बारूद और अग्नि को इकट्ठा न होने दिया जाए, तो विस्फोट की कोई सम्भावना नहीं है। यह समझकर वह अपने दृष्टिकोण में दान होने दिया जाए तो कित सूक्ष्मदर्शिता को प्रधानता देता है। तदनुसार उसे सांसारिक समस्यायें बहुत हल्की और महत्त्वहीन मालूम पड़ती हैं। जिन बातों को लेकर साधारण मनुष्य बेतरह दुःखी रहते हैं, उन स्थितियों को वह हलके विनोद की तरह समझकर उपेक्षा में उड़ा देता है और आत्मिक भूमिका में अपना दृढ़ स्थान बनाकर सन्तोष और शान्ति का अनुभव करता है।

गीता के दूसरे अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण ने बताया है कि स्थितप्रज्ञ मनुष्य अपने भीतर की आत्म-स्थिति में रमण करता है। सुख-दुख में समान रहता है, न प्रिय से राग करता है, न अप्रिय से द्वेष करता है। इन्द्रियों को इन्द्रियों तक ही सीमित रहने देता है, उसका प्रभाव आत्मा पर नहीं होने देता, कछुआ जैसे अपने अंगों को समेटकर अपने भीतर कर लेता है, वैसे ही वह अपनी कामनाओं और लालसाओं को संसार में न फैलाकर अपनी अन्तः भूमिका में ही समेट लेता है, जिसकी मानसिक स्थिति ऐसी होती है उसे योगी, ब्रह्मभूत, जीवन-मुक्त या समाधिस्व कहते हैं। आनन्दमय कोश की स्थिति पञ्चम भूमिका है। इसे समाधि अवस्था भी कहते हैं। समाधि अनेक प्रकार की है। काष्ठ-समाधि, भाव-समाधि, ध्यान-समाधि, प्राण-समाधि, सहज-समाधि आदि २७ समाधियों बताई गई हैं। मूर्छा, नशा एवं क्लोरोफार्म आदि सूंघने से आई हुई समाधि को काष्ठ समाधि कहते हैं। किसी भावना का इतना अतिरेक हो कि मनुष्य की शारीरिक चेष्टायें संज्ञाशून्य हो जाए, उसे भाव समाधि कहते हैं। ध्यान में इतनी तन्मयता आ जाए कि उसे अदृश्य एवं निराकार सत्ता साकार दिखाई पड़ने लगे, उसे ध्यान-समाधि कहते हैं, इष्टदेव के दर्शन जिन्हें होते हैं उन्हें ध्यान-समाधि की अवस्था में ऐसी चेतना आ जाती है कि यह अन्तर उन्हें नहीं विदित होने पाता कि हम दिव्य नेत्रों से ध्यान कर रहे हैं या आँखों से स्पष्ट रूप से अमुक प्रतिमा को देख रहे हैं। प्राण-समाधि ब्रह्मरन्ध में प्राणों को एकत्रित करके की जाती है। हठयोगी इसी समाधि द्वारा शरीर को बहुत समय तक मृत बनाकर भी जीवित रहते हैं। अपने आपको ब्रह्म में लीन होने का जिस अवस्था में बोध होता है उसे बह्म समाधि कहते हैं।

पंचकोश स्वास्थ्य मॉडल

	कोश	आयाम	स्वास्थ्य हेतु साधन / उपाय	समग्र स्वास्थ्य पर प्रभाव	लाभ
1.	अन्नमय कोश	शारीरिक (Physical)	संतुलित आहार, योगासन, व्यायाम, दिनचर्या	शरीर पुष्ट, रोग प्रतिरोधक क्षमता, ऊर्जा वृद्धि	श्वास की शुद्धता (प्राणायाम, अनुलोम-विलोम) प्राण प्रवाह का संतुलन (नाड़ी शोधन) जीवन शक्ति में वृद्धि थकान और तनाव का निवारण
2.	प्राणमय कोश	प्राणिक (Vital Energy)	प्राणायाम, नाड़ी शोधन, सूर्य नमस्कार	प्राण प्रवाह संतुलन, थकान दूर, जीवन शक्ति में वृद्धि	श्वास की शुद्धता (प्राणायाम, अनुलोम-विलोम) प्राण प्रवाह का संतुलन (नाड़ी शोधन) जीवन शक्ति में वृद्धि थकान और तनाव का निवारण
3.	मनोमय कोश	मानसिक (Mental)	ध्यान, जप, सकारात्मक सोच, भावनात्मक संतुलन	तनाव मुक्त मन, एकाग्रता, आत्मविश्वास	ध्यान एवं जप भावनाओं का संतुलन सकारात्मक सोच एवं आत्मविश्वास तनावमुक्त जीवन शैली
4.	विज्ञानमय कोश	बौद्धिक (Intellectual)	स्वाध्याय, आत्मचिंतन, सत्संग, विवेक-विकास	सही निर्णय क्षमता, ज्ञान का सदुपयोग	आत्मचिंतन एवं विवेक शास्त्र अध्ययन (स्वाध्याय) निर्णय क्षमता का विकास सही दिशा में ज्ञान का प्रयोग
5.	आनन्दमय कोश	आत्मिक (Spiritual/ Bliss)	ध्यान की गहन अवस्था, आत्मा से एकत्व, साधना	शांति, संतोष, आनन्द, मोक्ष की अनुभूति	ध्यान की गहन अवस्था आत्मिक शांति और संतोष परमात्मा से एकत्व की अनुभूति

					समग्र आनन्द की प्राप्ति

भारतीय जीवन पद्धति

भारतीय जीवन पद्धति समग्र आरोग्य का एक उत्कृष्ट मॉडल है, जिसमें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आत्मिक स्वास्थ्य का समावेश होता है। यह पद्धति केवल रोगों की अनुपस्थिति को स्वास्थ्य नहीं मानती, बल्कि संपूर्ण जीवन के हर पहलू में संतुलन एवं समरसता को सर्वोपरि मानती है। बदलते समय में, बढ़ते शहरीकरण, औद्योगीकरण, गतिहीन जीवनशैली, बदलती खानपान की आदतें और बढ़ता मानसिक तनाव, समग्र आरोग्य के लिए गंभीर चुनौतियाँ बनकर उभरे हैं।

भारतीय संस्कृति में योग, आयुर्वेद, संतुलित आहार, प्राणायाम, ध्यान तथा दिनचर्या के शास्त्रीय नियमों को जीवन में स्थान दिया गया है, जिससे न केवल शरीर बल्कि मन और आत्मा की भी देखभाल होती है। आयुर्वेद में आहार-विहार, ऋतुचर्या एवं दिनचर्या का पालन, प्राकृतिक चिकित्सा और मानसिक स्वास्थ्य के लिए ध्यान और योग का व्यापक महत्व है।

समग्र आरोग्य के लिए भारतीय जीवन पद्धति की ओर पुनः लौटना आज न केवल भारत के लिए, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए बेहद आवश्यक हो गया है। योग, ध्यान, आयुर्वेदिक आहार, प्राणायाम और शारीरिक श्रम को अपनाकर मानसिक व शारीरिक रोगों से बचाव संभव है। सरकारी योजनाएँ जैसे 'आयुष्मान भारत' एवं स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रम इस दिशा में सकारात्मक परिवर्तन ला रहे हैं। साथ ही, परिवार और समाज आधारित जीवन मूल्यों को पुनर्जीवित करके सामूहिक स्वास्थ्य और सामंजस्य को बढ़ावा देने की आवश्यकता है ,अतः भारतीय जीवन पद्धति में स्वास्थ्य का अर्थ है—इन पाँचों कोशों का संतुलन। केवल शरीर को स्वस्थ रखना पर्याप्त नहीं है; बल्कि प्राण का संतुलन, मन की शांति, बुद्धि का परिष्कार और आत्मानंद की अनुभूति ही समग्र आरोग्य है। योग, प्राणायाम, ध्यान, सात्त्विक आहार और नैतिक जीवन पद्धति इन सभी कोशों को शुद्ध और संतुलित करते हैं।

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने भी अपने साहित्य में पंचकोश सिद्धांत को आत्मविकास और समाज निर्माण की आधारशिला माना है। उनके अनुसार, पंचकोश का संतुलित विकास मानव जीवन को देवत्व की ओर अग्रसर करता है और यह समग्र स्वास्थ्य का वास्तविक स्वरूप है।

निष्कर्ष

पंचकोश सिद्धांत आधुनिक स्वास्थ्य प्रणाली का पूरक मॉडल है। यह केवल रोग निवारण तक सीमित नहीं है, बल्कि रोग निवारण (Curative), रोग रोकथाम (Preventive) और प्रमोटिव हेल्थ तीनों आयामों को समेटता है।

जीवनशैली रोग जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, मोटापा — आहार और योगाभ्यास से नियंत्रित।

मानसिक रोग जैसे अवसाद, तनाव — ध्यान और सकारात्मक चिंतन से दूर।

आध्यात्मिक शून्यता — भक्ति, साधना और संस्कारों से भरपाई।

इस प्रकार पंचकोश सिद्धांत व्यक्तिगत ही नहीं बल्कि सामाजिक और वैश्विक स्वास्थ्य के लिए भी मॉडल प्रस्तुत करता है। पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी के अनुसार पंचकोश सिद्धांत मानव जीवन की सम्पूर्णता का प्रतीक है। यह स्वास्थ्य का समग्र मॉडल है, जो केवल शारीरिक रोग निवारण तक सीमित न होकर मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक आयामों को भी संतुलित करता है। आधुनिक युग में जब जीवनशैली रोग और मानसिक तनाव बढ़ रहे हैं, पंचकोशीय दृष्टिकोण एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करता है।

संदर्भ सूची

1. तैत्तिरीय उपनिषद, (पृ. 225–280), मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन।
2. पतंजलि, (1999)। योगसूत्र (स्वामी प्रभवानंद एवं क्रिस्टोफर ईशरवुड द्वारा अनूदित, पृ. 45–198)। वेदांत प्रेस।
3. चरक, (2003), चरक संहिता (खंड 1, पृ. 1–340)। चौखंबा ओरिएंटालिया।
4. शर्मा, श्रीराम, (1995), आत्मा का उत्कर्ष और भविष्य का निर्माण युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा।(पृ. 15–220)।
5. शर्मा, श्रीराम, (1998),सुप्त शक्ति का जागरण युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा। (पृ. 10–185)।
6. अरविंदो, श्री, (2005), द लाइफ डिवाइन ,श्री अरविंद आश्रम प्रकाशन विभाग, पांडिचेरी।
7. महेश योगी, महार्षि,(1963)। द साइंस ऑफ बीइंग एंड आर्ट ऑफ लिविंग (पृ. 50–280)। न्यूयॉर्क: न्यू अमेरिकन लाइब्रेरी।
8. ऐश्वर्या, एच. एन., एवं नायर, सी. एन. (2019)। The Pancha Koshas: Keys to Unveil Our True Self. इंटरनेशनल आयुर्वेदिक मेडिकल जर्नल, 7(11), 2096।
9. शुक्ला, एम., एवं अन्य। (2025)। Neuroscience and the Pancha Kosha: A Scientific Exploration. अफ्रीकन जर्नल ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च, 28(1S)।
10. विजय, एम. (2025, मार्च), A Philosophical and Scientific Exploration of the Five Sheaths (Pancha Kosha) That Unveil Consciousness (Chaitanya)।
11. शर्मा, श्रीराम, 2014, गायत्री महाविज्ञान संयुक्त संस्करण, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि मथुरा (पृ. 282 – 364)
12. TalktoAngel. (2025, जनवरी 7), Pancha Kosha Model of Human Existenc